International Journal of Research
Special Issue for Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

वेदान्तदर्शन पर स्वामी ब्रह्ममुनि के विचार

डॉ० राम भगत
संस्कृत, पालि एवं प्राकृत विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक।

वेदान्तदर्शन जिसका कि दूसरा नाम शारीरिक सूत्र है, वह अनेक विद्वन्मण्डल के शिरोमणि महानुभावों द्वारा भाष्य–टीकादि से भूषित है। श्रीमद्भगवद्गीता और उपनिषदों के साथ यह दर्शन प्रस्थानत्रयी को बनाता है। उपनिषद् रहस्य विस्फुट करने के लिए श्रीमान् व्यासमुनि जी ने यह शास्त्र रचा है, यह प्रसिद्ध है। बोधायन मुनि, द्रमिडटङ्क आचार्यों ने भो इसकी व्याख्या की थी, यह रामानुजभाष्य से ज्ञात होता है। उक्त भाष्य काल–कराल में चले गए। इस समय उपलब्ध भाष्यों में शाङ्करभाष्य अपेक्षाकृत प्राचीन है, उसके पीछे रामानुजाचार्य आदिकृतभाष्य हुए हैं।[1]

शंकराचार्य महान् विद्वान् यशोभाक् माने जाते हैं। उनका भाष्य अद्वैतपरक है। 'ब्रह्म के अतिरिक्त कोई भी वस्तु सत्तात्मक नहीं है' – यह उनका सिद्धान्त है।[2] अर्थात् ब्रह्म के अतिरिक्त जीव या जगत् की पारमार्थिक सत्ता नहीं है। इस सिद्धान्त को रामानुजाचार्य नहीं मानते। उनके द्वारा यह प्रबलरूप से निराकृत किया गया। उनके मत में जीव और जगत् मिथ्या–असत् या असत्य नहीं है किन्तु ब्रह्म के देहरूप जीव और जगत् है, इनसे विशिष्ट ब्रह्म है, अतएव उनका मत विशिष्टाद्वैत नाम से कहा जाता है। शंकराचार्य के मत में ब्रह्म ज्ञानवाला नहीं, किन्तु ज्ञानरूप है जबकि रामानुज मत वाले ब्रह्म को चेतन – चेतनावाला, ज्ञानवाला मानते हैं। उन दोनों का यह एक दूसरे से महान् भेद–विरोध है। रामानुजाचार्य विष्णु के उपासक हैं।[3]

माधवाचार्य ने भी इस दर्शन का भाष्य किया है। यह विस्तृत नहीं प्रत्युत अत्यल्प शब्दों में थोड़े आकार में है। ये वैष्णव है परन्तु रामानुज की भाँति विशिष्टाद्वैतवाद को नहीं मानते। माध्वसम्पदायवर्ती जन ब्रह्म को

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

साकार मानते हैं। ये विष्णु को ही परमदेव मानते हैं।[4] वल्लभाचार्य भी भेदवादी हैं, वे भी वैष्णव हैं। वे अपना सिद्धान्त शुद्धद्वैत कहते हैं। ब्रह्म के अतिरिक्त सभी जीव गोपिकाएँ हैं – ऐसा उनके द्वारा प्रचार किया जाता है। निम्बाकाचार्य भी वैष्णव हैं। वे भेदाभेद के संस्थापक हैं। जीवों और जगत से ब्रह्म भिन्न भी है, अभिन्न भी है, यह विज्ञानभिक्षु ने भी माना है।[5]

वास्तव में, शंकराचार्य आदि सब महान् विद्वान् इस प्रकार परस्पर विरूद्ध कथन करते हैं कि महान् विद्वान् भी उनके सिद्धान्तों को समन्वित नहीं कर सकता, साधारण पढ़े हुए की तो कथा ही क्या? वेदान्त सूत्रों द्वारा बादरायण जी का क्या अभिप्राय था? यह बात भाष्यरूप अन्धकार में छिप गई है। व्याकुल जिज्ञासु खिन्नता का अनुभव करता है। कौन भाष्यकार श्रद्धायोग्य है और कौन त्यागने योग्य है? यह महान् विचारणीय एवं संदेहास्पद विषय है। सब अपने-अपने मत का पोषण करते हैं और दूसरे का खण्डन करते हैं। तटस्थ जिज्ञासु संदेह में पड़ जाता है। कोई मतवादी तो अपने मत को प्रकट करने के लिए सूत्राक्षरों का परिवर्तन भी निःसंकोच कर गए। अधिकरणों की दुर्दशा हो गई, जो सूत्र एक मतवादी का पूर्वपक्षपरक है, वही दूसरे मतवादी का सिद्धान्त कहने वाला है, सिद्धान्तपरक है।[6]

इन भाष्यों का यह एक और दोष है जो कि जिज्ञासु को व्याकुल करता है। सूत्रकार व्यासमुनि को कहीं-कहीं अपने अभिप्राय के समर्थन में वेदमन्त्र अपेक्षित हैं। अतएव उसने 'मान्त्रवर्णिकमेव च गीयते'[7] इत्यादि सूत्र रचे हैं। उन सूत्रों के भाष्य तो अवश्य व्यासाभिप्रेत वेदमन्त्रों के सहित होने चाहिए, किन्तु महान् आश्चर्य! ये भाष्यकार किसी भी वेदमन्त्र को प्रमाणरूप से नहीं देते हैं।

ऐसे भ्रान्तिपूर्ण वातावरण में महर्षि दयानन्द के उद्घोष ने भारतीय समाज में वचारिक दार्शनिक क्रान्ति ला दी। उन्होंने बताया कि न्याय-वेदान्तादि सभी आस्तिक ग्रन्थ वेदों के उपाङ्ग है। शरीर के अंग जैसे परस्पर भिन्न होते हुए भी, परस्पर विरोधी नहीं होते; वैसे ही वेदों के उपांग दर्शन ग्रन्थ परस्पर भिन्न हैं, किन्तु किसी प्रकार विरोधी नहीं हो सकते। इन्हीं का अनुकरण करते हुए स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने 'वेदान्त दर्शन

International Journal of Research
Special Issue for Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

ब्रह्ममुनिभाष्योपतम्' ग्रन्थ लिखा।

इस ग्रन्थ में इन्होंने उपर्युक्त समस्त दोषों को हटाकर, वेदों का उपांग होना लक्ष्य कर वेदान्तदर्शन का वैसा भाष्य लिखा। इन्होंने अपने भाष्य में पूर्वाचार्यों की स्वीकार की गई अधिकरण श्रृंखला न मानी। शोधकर्त्ता ने स्वामी ब्रह्ममुनि के वेदान्त दर्शन में निम्नलिखित सात अद्वितीय विशेषताओं को पाया, जिनके द्वारा स्वामी जी ने प्राच्य विद्या क्षेत्र में अपूर्व योगदान दिया –

स्वामी ब्रह्ममुनि द्वारा प्रतिपादित वेदान्दर्शन के सिद्धान्त/शांकरभाष्य की आलोचना

1. अद्वैतमत में अध्यास संभव ही नहीं

वेदान्त दर्शन के आधुनिक भाष्याकारों में स्वामी शंकराचार्य प्रसिद्धतम हैं और अद्वैतपरक उनका रचा भाष्य है जो कि शांकरभाष्य नाम से प्रसिद्ध है। उसमें शंकराचार्य ने अपने मत को उपोद्घात में प्रकट किया है और उसको सिद्ध करने के लिए अध्यास का अवलम्बन किया है; परन्तु स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक ने इसका खण्डन करते हुए लिखा है कि अद्वैत मत में अध्यास नहीं बन सकता। कारण – अध्यास है ही अन्य में अन्य के धर्म का अवभास – प्रतीति या अतद् में तद्बुद्धि – न वैसे में वैसी बुद्धि। जैसा कि वहाँ ही उपोद्घात् में शंकराचार्य ने कहा है –

''अध्यासो नाम .... सर्वथापि तु अन्यस्यान्यधर्मावभासतां न व्यभिचरित

... शुक्तिका ... रजतवदवभासते।''[8]

''अध्यासो नाम अतस्मिस्तद् बुद्धिरित्यनोचाम।''[9]

ब्रह्ममुनि के अनुसार – जब ब्रह्म ही एक है, उससे भिन्न अन्य वस्तु नहीं है; तब अन्य में अन्य के धर्म की अवभासता या अतद् में तद्बुद्धि कथन का अवसर नहीं। 'शुक्तिका रजतवदवभासते' – सीपी–चाँदी जैसी अवभासित हो रही है, इस उदाहरण में शुक्ति–सीपी और रजत चाँदी का पृथक्–पृथक् वस्तु होना तथा

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

समानकाल में उनका वर्तमान होना स्वीकार करके ही उसमें अध्यास का कथन युक्त है न कि केवल शुक्ति–सीपी में और न केवल रजत–चाँदी में अध्यास संभव है। अतः अद्वैत मत में अध्याय बन ही नहीं सकता।[10]

अध्यास यदि बन सकता है तो अद्वैत की हानि हो जाती है, उसके भिन्न–भिन्न वस्तुओं में प्रवर्तमान होने से। उसी प्रकार शंकराचार्य ने वहाँ उपोद्घात् में द्वैत चिदात्मचेतनरूप – अस्मत् शब्दवाच्य, अचिदात्मक जड़रूप युष्मत् शब्द–वाच्य स्वीकार ही किया है। ''युष्मदस्मत्प्रत्ययगोचरयोर्विषयविषयिणोस्तमः प्रकाशवद्विरूद्ध स्वभावयोरितर भावानुपपत्तौ चिदात्मके युष्मत्प्रत्ययगोचरस्य विषयस्य तद्धर्माणां चाध्यासः।''[11] इस प्रकार स्वामी ब्रह्ममुनि ने सिद्ध किया है कि चिदात्मक और अचिदात्मक या चेतनरूप और जड़रूप दो वस्तुएँ तो सिद्ध होती ही हैं।

2. जीवात्मा ब्रह्म का प्रतिबिम्ब नहीं, नित्य है।

शाङ्करमत में ब्रह्म से भिन्न जीवात्मा नहीं माना जाता, उसका प्रतिबिम्ब स्वीकार किया जाता है। स्वामी ब्रह्ममुनि के अनुसार वेदान्त दर्शन में यह सिद्धान्त नहीं मिलता, वहाँ एक भी सूत्र उसका पोषक नहीं है, अपितु यह मत निराकृत किया गया है। जैसा कि

नात्माऽश्रुतेर्नित्यत्वाच्च ताभ्यः।[12]

तस्य च नित्यवात्।[13]

कर्त्ता शास्त्रार्थवत्त्वात्।[14]

उक्त सूत्रों में जीवात्मा का अमर, नित्य, कर्मकर्त्ता, भोक्ता होना सिद्ध किया गया है तथा 'अम्बुवदग्रहणात्तु न तथात्वम्'।[15] इस सूत्र में जीवात्मा में परमात्मा के प्रतिबिम्ब होने का निषेध कहा है और श्री द्युभ्वाद्यायतन प्रकरण में 'प्राणभृच्च'[16] सूत्र से जीवात्मा भी ब्रह्म की भाँति द्युभ्वादिमय जगत से पूर्व वर्तमान हो। अतः जीवात्मसंबंधी शांकरमत वेदान्तसूत्रों से बाहिर होने से आदरणीय नहीं है।[17]

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

3. प्रकृति जगत् का उपादान कारण है, न कि ब्रह्म ही अभिन्ननिमित्तोपादान कारण

शांकरमत में प्रकृति भी जगत् का उपादान कारण स्वीकार नहीं की जाती, ब्रह्म ही अभिन्ननिमित्तोपादान कारण माना जाता है। परन्तु स्वामी ब्रह्ममुनि के अनुसार वेदान्त दर्शन में वह भी उपादानरूप से जगत् का कारण इष्ट है। जैसा कि –

ज्योतिरूपक्रमा तु तथा ह्यधीयते[18]

इस सूत्र में तीन गुणों – ज्योति आद – सत्त्वादि गुण वाली प्रकृति निर्दिष्ट है। और

सर्वोपेता च तद्दर्शनात्[19]

यहाँ प्रकृति को जगद्रचना में सर्वसाधन दिग् देश काल से युक्त कहा गया है। और भी

प्रकृतिश्च प्रतिज्ञादृष्टान्नतानुपरोधात्[20]

जगत् के कारण प्रसंग से प्रकृति भी कही गई है। इसीलिए

साक्षाच्चोभ्यामन्नात्[21]

दोनों परमात्मा और प्रकृति का साक्षात् जगत् के कारण प्रसंग में है। अपि च

तद्धीनत्वादर्थवत्[22]

इस सूत्र में प्रकृति नामक अव्यक्त को जगत का कारण परमात्मा के अधीन स्पष्ट कहा है। स्वामी ब्रह्ममुनि ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए कहा है कि इस सूत्र का शांकर भाष्य में भी प्रकृति की सत्ता स्वीकार की गई है। जैसा कि – ''परमेश्वराधीना त्वियमस्माभिः प्रागवस्था जगतोऽभ्युयगम्यते न स्वतन्त्रता, सा चावश्यमभ्युपगन्तव्या, अर्थवही हि सा न हि तथा विना परमेश्वरस्य स्रष्ट्टत्वं सिध्यति ... एतदव्यक्तं क्वचिन्मायेति सूचितम् – मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्।[23]

अर्थात् जगत् से पहली अव्यक्त रूप अवस्था परमेश्वर के अधीन तो हम मानते हैं, स्वतन्त्र नहीं और यह अवश्य माननी चाहिए, यह प्रयोजन वाली है – सार्थक है। उसके बिना परमेश्वर का स्रष्टा होना, सृष्टिकर्त्ता

होना सिद्ध नहीं हो सकता। यह अव्यक्त कहीं माया नाम से सूचित की गई है – ''मायां तु प्रकृतिं ...'' अव्यक्त–प्रकृति को माया और परमेश्वर को मायी कहा गया है श्वेताश्वतरोपनिषद में। इस प्रकार शांकर भाष्य से ही सिद्ध हुआ कि प्रकृति भी जगत् का कारण है और वह परमात्माधीन होने से उपादान कारण है।[24]

4. जगत् स्वप्नवत् नहीं, वास्तविक है

अद्वैतवादी जन जगत् को स्वप्नवत् – मिथ्या मानते हैं, किन्तु स्वामी ब्रह्ममुनि के अनुसार यह मत भी वेदान्तशास्त्र के विरूद्ध ही है। इनके अनुसार वेदान्त दर्शन में प्रसंगतः जगत् का स्वप्नवत् होना निषिद्ध किया गया है – ''वैधर्म्याच्च न स्वप्नादिवत्''[25] यहाँ सूत्र पर शांकर भाष्य भी सूत्रानुसार ऐसा ही है। अतः जगत् न स्वप्नवत् है न मिथ्या है।[26]

ब्रह्ममुनि के मतानुसार – यदि तो जगत् मिथ्या हो तो ब्रह्म भी सिद्ध न हो। जगत् की विद्यमानता – जगत् के होने को आश्रित करके ही 'जन्माद्यस्य यतः'[27] इस सूत्र द्वारा ब्रह्म की सिद्धि की जाती है। अतः जगत् स्वप्नवत् या मिथ्या नहीं है।[28]

5. जीव और ब्रह्म एक नहीं

जीव और ब्रह्म की एकता सिद्ध करने के लिए शंकराचार्य ने वेदान्त सूत्रों के भाष्य में स्थान–स्थान पर पुनः–पुनः ''अहं ब्रह्मास्मि'' तथा ''तत्त्वमसि'' ये दो वचन उद्धृत किये हैं। स्वामी ब्रह्ममुनि ने इनका विवेचन करते हुए कहा है कि 'अहं ब्रह्मास्मि' यह वचन वेद में नहीं अपितु शतपथ ब्राह्मण में है, वही प्रकरण बृहदारण्यकोपनिषद् में उद्धृत है। अतः इस वचन को आश्रित करके शांकर मत अथवा जीव ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन वैदिक मत नहीं कहा जा सकता।[29]

न हो वैदिक मत, किन्तु वेद विरूद्ध तो नहीं, यदि ऐसा कहा जाए, तो यदि इस वचन का अर्थ जीव–ब्रह्म की एकता प्रदर्शक किया जावे, तब तो स्वामी ब्रह्ममुनि स्पष्ट कहते हैं कि यह मत वेद विरूद्ध है, क्योंकि वेद में –

''उत स्वया तन्वा संवदे तत्कदान्वतन्तर्वरूणे भुवानि।

किं में हव्य महणानो जुषेत कदा मृलीकं सुमना अभिख्यम्।।''[30]

यह प्रार्थना है। यदि जो जीव भी ब्रह्म हा तब ऐसी प्रार्थना वेद के अन्दर ब्रह्म में स्वात्मा को अपर्ण की – न की जावे। वस्तुतः यह वचन जीव ब्रह्म की एकता का प्रदर्शक नहीं किन्तु यह तो अर्थ–वाद का प्रदर्शक है। ब्राह्मण ग्रन्थों का प्रायः अर्थवाद विषय है।[31] शतपथ ब्राह्मण में आया समग्र वचन निम्नलिखित है –

''ब्रह्म वा इदमग्र आसीत् तदात्मानमेवावेदाहं ब्रह्मास्मीति। तस्मात्तत्सर्वमभवत्। तद् यो यो देवानां प्रत्यबुध्यत स एव तदभवत् तथर्षीणां तथा मनुष्याणाम्। तद्धैतत्पश्यन्नृषिर्वामदेवः प्रतिपेदे–अहं मनुरभवमहं सूर्यश्चेति। तदिदमप्येतर्हि यो वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वं भवति तस्य न देवाश्चनाभूत्या ईशते।''[32]

यहाँ अर्थवाद स्पष्ट है। 'अहं ब्रह्मास्मि' में ब्रह्म शब्द महद् वस्तु का पर्याय है। देव, ऋषि मनुष्यों में जो कोई जिस रूप में अपने को महत्त्ववाला जानता है या चेताता है, वह उस रूप वाला अपने का बना लेता है। इसमें उदाहरण वामदेव ऋषि का सूर्य हो जाने, मनु हो जाने के लिए दिया है, न कि ब्रह्म हो जाने के लिए दिया है। यदि न मानें तो प्रत्येक जन 'अहं ब्रह्मास्मि' मैं ब्रह्म हूँ, ऐसा उपनिषद् के सिद्धान्त में नहीं कर सकता, क्योंकि वहाँ तो –

'यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति।'[33] ब्रह्मवेत्ता का ब्रह्म हो जाना दिखलाया है आर न कि सर्वथा नहीं किन्तु परमब्रह्मवेत्ता का ब्रह्मभाव, न कि परम ब्रह्मभाव।

यह तो उपासना विद्या का सिद्धान्त है कि उपास्य के गुण उपासक में प्रायः आते ही हैं। यह सिद्धान्त वैदिक है – ''तेजोऽसि तेजो मयिधेहि ...''[34] हे परमात्मन्! तू तेजः स्वरूप है, मुझमें तेज धारण करा, आदि वेद के अनुसार है। उक्त उपनिषद् में कहा हुआ भी ब्रह्मभाव सर्वथा नहीं, संसारीजन के अपने को ब्रह्म कहने की तो कथा ही क्या? मुक्त को भी सर्वथा ब्रह्मभाव प्राप्ति नहीं होती है, यह वेदान्त दर्शन का सिद्धान्त है। वहाँ

वेदान्त दर्शन में ''मुक्तः प्रतिज्ञानात्''[35] मुक्त का विषय स्पष्ट प्रतिपादित है।

जगद्व्यापारवर्जं प्रकरणादसन्नि हितत्वाच्च[36]

मुक्त भी मोक्ष में सर्वथा ब्रह्म नहीं होता किन्तु स्वरूपतः पृथक् रहता है। वह जगत् का उत्पत्ति आदि कार्य ब्रह्म की भाँति नहीं कर सकता, इस कथन से। अतः 'अहं ब्रह्मास्मि' वचन को लेकर जीव-ब्रह्म की एकता के दिखलान का प्रयत्न निरर्थक ही है।[37]

तत्त्वमसि का विवेचन

'तत्त्वसमि' इस कथन का 'वह ब्रह्म तू है' यह अर्थ जो शंकराचार्य द्वारा किया जाता है, वह भी स्वामी ब्रह्ममुनि के अनुसार वास्तविक नहीं है, क्योंकि यह वचन परमात्मकपरक नहीं किन्तु जीवात्मपरक उस उपनिषद में स्पष्ट है -

''अस्य सोम्य प़रुषस्य प्रयतो वाङ्मनसि सम्पद्यते, मनः प्राणे ...'' इस वचन से मरते हुए - शरीर से निकलते हुए जीव का विषय चलाकर 'त इह व्याघ्रो वा सिंहो वा ... दंशों वा मशको वा यद् यद् भवन्ति तदा भवन्ति, स य एषोऽणिमैतदात्म्यं ... स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो' व्याघ्र सिंह आदि भिन्न-भिन्न योनियों में घूमता हुआ, वह यह आत्मा हे श्वेतकेतो! तू है इस कथन से जीवात्मा लक्षित होता है। आगे भी -

''अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद् यो मध्ये ...। अस्य यदेकां शाखां जीवो जहात्यथ सा शुष्यति ... सर्वं जहाति सर्वः शुष्यति। जीवापेतं वाव किलेदं म्रियते, न जीवो म्रियते, इति स य एषोऽणिमैतदात्मयं स आत्मा तत्त्वमसि श्वेतकेतो''।[38] इस महान् वृक्ष के मूल में जो कुहार मारे तो वह जीता रहेगा, जीता हुआ रस कटे स्थान से छोड़ेगा, बीच में मारे तो बीच में से रस छोड़ेगा, जीता रहेगा। यदि इसकी एक शाखा को जीव छोड़ देता है, तो वह सूख जाती है ... सब वृक्ष को छोड़ देता है तो सब वृक्ष सूख जाता है। जीव से रहित हुआ मरता है, जीव नहीं मरता है। वह न मरने वाला अणु जीवात्मा, हे श्वेतकेतु! तू है।[39]

जीवात्मा के अमर - नित्य होने को साधने वाले वेदान्तसूत्र - ''नात्माऽश्रुतेर्नित्यत्वाच्च ताभ्यः''।[40] पर

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

शांकरभाष्य में यह 'न जीवो म्रियते'[41] जीवात्मपरक होने से उद्घृत किया है। अतः स्वामी ब्रह्ममुनि मतानुसार साक्षात् जीवपरक वचन को ब्रह्मपरक कर, श्वेतकेतु के साथ लगाने की अन्यथा कल्पना करके जीव ब्रह्म की एकता का दिखलाना अयुक्त है।[42]

6. शाङ्कर भाष्य परमप्रमाण नहीं

स्वामी ब्रह्ममुनि ने शाङ्कर भाष्य को प्रमाण नहीं माना। शाङ्कर भाष्य को प्रमाण न मानने के अनेक कारण बतलाये, जो निम्नलिखित हैं[43]–

1. अध्ययन परम्परा में प्रथम नहीं – वेदान्तसूत्रों के रचना के अनन्तर ही अध्ययन परम्परा से प्रथम ही यह शाङ्कर भाष्य है, इस हेतु इस भाष्य की प्रमाणता हो, सो नहीं, क्योंकि शाङ्कर भाष्य से पूर्व अन्य भाष्य और व्याख्यान थे। जैसे ' प्रपञ्चहृदय' में कहा है कि इस पर पुरातन भाष्य बौधायन ने किया था, पुनः संक्षिप्त भाष्य उपवर्ष ने किया था, फिर भगवत्पाद, ब्रह्मदत्त, भास्कर आदि ने किया था। अन्य अनेक भाष्यों का वृतान्त शाङ्कर भाष्य में भी अनेक स्थानों पर सूचित किया है।
2. पूर्व भाष्यों के अनुसार नहीं है शाङ्कर भाष्य – स्वामी ब्रह्ममुनि ने कहा है कि पूर्व भाष्यों के अनुसार शाङ्कर भाष्य है, इसलिए प्रमाण मानें, सो भी नहीं; क्योंकि वहाँ उन पूर्वभाष्यों का खण्डन किया गया है।
3. अनेक स्थलों पर संदेह युक्त वचन – शाङ्कर भाष्य अध्यात्मयोग से साक्षात् करके किया है, इसलिए प्रमाण है, सो भी नहीं। उनमें अनेक स्थलों पर शङ्कराचार्य संदेह में पड़े हुए हैं, क्योंकि वे अनेक अर्थों को करते हैं, जसा कि –

क) 'शास्त्रयोनित्वात्'[44] सूत्र के अर्थ 'अथवा यथोक्त ऋग्वेदादिशास्त्रस्य योनिः कारणं प्रमाणस्य ब्रह्मणो यथावत्स्वरूपाधिगमे'[45] यहाँ अथवा शब्द से भिन्न–भिन्न दो अर्थ किए हैं।

ख) 'जीवमुख्यप्राणलिङ्गान्नेति चेन्नोपासात्रैविध्यात्'[46] सूत्र के अर्थ में ''अन्यथा वा सूत्रद्वयं व्याख्याते अधिष्ठानानुपपत्तेश्च ...''[47] यहाँ वा शब्द से दोनों सूत्रों का अन्य अर्थ किया।

ग) 'करणवच्चेन्न भोगादिभ्यः'[48] सूत्र के अर्थ में अन्यथा वा सूत्रद्वयं व्याख्यायते अधिष्ठानानुपपत्तेश्च ...''[49] यहाँ वा शब्द से दोनों सूत्रों का अन्य अर्थ किया।

घ) 'तनिष्ठस्य मोक्षोपदेशात्'[50] इस सूत्र भाष्य में 'अथवा पूर्वसूत्रत एवात्मशब्दं निरस्त समस्तगौणत्व साधारणत्वशंकया व्याख्याय ततः स्वतन्त्र एव प्रधानकारणहेतुर्व्याख्येवः तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्'[51] यहाँ अथवा शब्द से पूर्व अर्थ से भिन्न अर्थ करने का विचार किया।

ङ) 'प्रकृतैतावत्त्वं हि प्रतिषेधति ततो ब्रवीति च भूयः'[52] इस सूत्र पर 'यद्वा पूर्वः प्रतिषेधो भूतराशिं प्रतिषेधत्युत्तरो वासनाराशिम्। अथवा नेति नेति वीप्सायामिति'[53] यहाँ यद्वा और अथवा दो शब्दों से अर्थों के तीन पक्ष रखे।

इस प्रकार 12 स्थलों पर संदेहयुक्त अर्थ करने से स्वामी ब्रह्ममुनि ने शांकर भाष्य को परम प्रमाण न मानकर 'वेदान्तदर्शनं ब्रह्ममुनिभाष्योपेतम्' नाम से अलग भाष्य किया।[54]

7. वेदान्तसूत्रानुसार उदाहरणरूप में वेदमन्त्रों का प्रयोग

स्वामी ब्रह्ममुनि के वेदान्तभाष्य को यह अद्वितीय विशेषता है कि वेदान्त सूत्रों के भाव को स्पष्ट करने के लिए जहाँ पूर्वाचार्यों ने केवल उपनिषदों के मन्त्र उदाहरणरूप में प्रयुक्त किए हैं, वहीं इन्होंने वेदमन्त्रों को प्रस्तुत किया है। यह बड़ी विडम्बना रही है कि वेदान्तसूत्रों के भाष्यकार बादरामण मुनि सम्मत अभिप्राय हेतु वेदमन्त्रों को गौण मानकर उपेक्षा करते हैं जो कि 'वेदनिन्दको नास्तिकः' जैसी स्थति उत्पन्न करते हैं। स्वामी ब्रह्ममुनि जी ने प्रायः सभी सूत्रों के उदाहरणस्वरूप में उपनिषदों के उदाहरण के साथ–साथ वेदमन्त्र प्रयोग करके एक क्रान्तिकारी कदम उठाया है।[55]इस प्रयोग से इनका वेदान्त भाष्य वेदानुकूल बनकर जनमानस के मस्तिष्क को भ्रान्ति या विरोधाभासी तर्कवितर्क के मेघों से मुक्त बनाकर, बादरायण मुनि के वास्तविक अभिप्राय को प्रदर्शित करता दिखाई देता है। इन्होंने अपने भाष्य द्वारा, वेदान्त सूत्रों को ही प्रमाण रूप म प्रस्तुत करते हुए ब्रह्म, प्रकृति और जीव को वास्तविक सत्य प्रमाणित किया है। इसके साथ–साथ साकारेश्वरवाद,

असद्वाद, अनेकान्तवाद, क्षणिकवाद, समुदायवाद, विज्ञानवाद और जगत् के स्वप्नादिवाद को निर्मूल प्रमाणित किया है।

[1] डॉ० बलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन, पृ० 341

[2] ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या - शंकराचार्य

[3] प्रो० हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 294

[4]डॉ० बलदेव उपाध्याय, भारतीय दर्शन, पृ० 385

[5]प्रो० हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, भारतीय दर्शन की रूपरेखा, पृ० 295

[6] स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, प्राक्कथन

[7] वेदान्तदर्शन 1.1.15

[8] ब्रह्मसूत्र शाङ्करभाष्य, उपोद्घात, पृ० 1

[9] वही, पृ० 2

[10]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 26

[11] वही

[12] वेदान्त० 2.3.17

[13] वेदान्त० 2.4.17

[14] वेदान्त० 2.3.39

[15] वेदान्त० 3.2.19

[16] वेदान्त० 1.3.4

[17]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 72-73

[18] वेदान्त० 1.19

[19] वेदान्त० 2.1.30

[20] वदान्त० 1.4.13

[21] वेदान्त० 1.4.25

[22] वेदान्त० 1.4.3

[23] श्वेता० 4.10 (शांकर भाष्य)

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

[24]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 28

[25]वेदान्त० 2.2.29

[26]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 142

[27]वेदान्त० 1.1.2

[28]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 34

[29] वही, पृ० 29

[30]ऋ० 7.86.2

[31]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 29

[32]शत० 14.4.2, 21–22, बृहदा० 1.4.10

[33]मुण्ड० 3.2.9

[34]यजु० 19.9

[35]वेदान्त० 4.4.2

[36]वही, 4.4.17

[37]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 30

[38]छान्दो० 6.11.3

[39]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 30

[40]वेदा० 2.3.17

[41]छान्दो० 6.11.3

[42]स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, पृ० 154

[43]वही, उत्थानिका, पृ० 31

[44]वेदान्त दर्शन 1.1.3

[45] वही, शांकरभाष्य

[46]वेदान्त दर्शन 2.2.40

[47] वही, शांकरभाष्यम

[48]वदोन्त दर्शन 2.2.40

[49] वही, शांकर भाष्यम

[50]वदोन्त दर्शन 1.17

[51] वही, शांकर भाष्यम्

[52]वदोन्त दर्शन 3.2.22

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 03 Issue 20
December 2016

[53] वही, शांकर भाष्यम्

[54] स्वा० ब्रह्म० परि०, वेदान्त दर्शन, उत्थानिका

[55] वही, प्रायः सभी सूत्रों के ब्रह्ममुनि भाष्य में